विकास की चुनौतियाँ

ऐसा क्यों होता है कि ज्यादातर व्यवसायों का विकास एक हद के बाद या तो रुक जाता है या वो असफल हो जाते हैं? सफल होना तो सभी चाहते हैं. पर विकास के साथ जो जटिलताएं आती हैं, हर कोई उससे जूझ नहीं पाता. तो क्या विकास के बिना और वर्तमान स्तर पर बने रहने से सफलता बरकरार रह सकती है? नहीं. कोई साईकिल चालाक किसी एक स्थान पर ज्यादा देर तक खड़े रहने का चुनाव नहीं कर सकता है. उसे या तो आगे बढ़ते जाना है या फिर वह गिर जाएगा. वैसे ही व्यवसाय में प्रयास तो निरंतर विकास का ही करना पड़ता है. अन्यथा प्रतिस्पर्धा, बदलती तकनीक, ग्राहक की बदलती इच्छायें आदि तथ्य किसी भी स्थिर व्यवसाय को बर्बाद कर सकते हैं. व्यावसायिक जगत में स्थिरता का ख्याल मात्र भी एक धोखा है. परिवर्तन में ही स्थिरता पाई जा सकती है.

एक अपरिपक्व व्यक्ति सफलता के रास्ते को बिल्कुल सीधा देखता है. उसे बचपन से यह सिखाया जाता है कि रास्ते में कोई भी बाधा या ठोकरे आयें, सभी को पार कर सफलता हासिल करनी है. मेहनत, और भी कड़ी मेहनत करनी है. जिस तरीके को अपनाकर सफलता मिल रही है, उसे और भी ज्यादा गहराई या दृढ़ता से करना है. ऐसे में वो ज्यादा से ज्यादा, और भी ज्यादा उसी चीज को करता है और वैसे ही करता है जैसे वह करता आ रहा है. हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति इस व्यवहार और मानसिकता को प्रोत्साहित भी करती है और उसका ईनाम भी देती है.

एक निश्चित पाठ्यक्रम (Fixed Syllabus) में निश्चित तरीके से अव्वल आने के लिए तो यह तरीका अच्छा है पर इससे सृजनात्मक और लचीली सोच, जो किसी भी असामान्य परिस्थिति से निपटने के लिए आवश्यक है, विकसित नहीं हो पाती. व्यक्ति जीवन की विषमताओं के लिए खुद को तैयार नहीं रख पाता है.

दरअसल व्यवसायिक विकास का रास्ता हवा में उठने या समुद्र में सफर करने की तरह नहीं है जो अक्सर सीधा होता है. यह तो पहाड़ चढ़ने की तरह है या कहें तो सीढ़ी चढ़ने की तरह है. हम सीढ़ी चढ़ते वक्त कुछ दूर एक दिशा में चलते हैं. फिर बीच में समतल स्थान पर दिशा

बदलते हैं और फिर अक्सर विपरीत दिशा में घूम जाते हैं. व्यवसायिक विकास का सफर भी कुछ इस तरह का ही है. कैसे, यह आगे देखते हैं.

जो व्यवसाय प्रथम सीढ़ी के संस्थापक चला रहे हों, उनमें सामान्यतः जो विशेषताएं पाई जाती हैं, वे हैं:

१. ***अत्यधिक आसक्ति :*** इस हद तक की अक्सर व्यापार के बाहर उनके जीवन में और कोई भी प्राथमिकता या शौक नहीं होता है.
२. ***सीधा व्यक्तिगत नियंत्रण :*** वे हर काम अपने हाथों से होना पसंद करते हैं या सभी कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं.
३. ***भावनात्मक निर्णय पद्धति :*** उनके निर्णय अक्सर तथ्यों पर नहीं बल्कि भावना या उनकी अपनी व्यक्तिगत समझ पर निर्भर करते हैं. उनकी कार्य प्रणाली भी अक्सर अनौपचारिक होती है.
४. ***पूँछ की परवाह :*** अपनी अज्ञानता में वे अक्सर हाथी जैसा बड़ा नुकसान भी निकल जाने देते हैं. और बर्दाश्त भी कर लेते हैं. अन्यथा उनका ध्यान पूँछ पर फंसा रहता है. यानी वो छोटे-मोटे खर्चों को बचाने में भी अपना बहुमूल्य समय लगा सकते हैं.
५. ***परफेक्शनिष्ट (Perfectionist):*** वे हर कार्य को बड़ी लगन से करते हैं और दूसरों से भी पूर्णता की अपेक्षा रखते हैं. इसी कारण वे दूसरों के काम में मीन-मेख निकालते रहते हैं.
६. ***कान के कच्चे पर सुनने में कमजोर :*** वे अक्सर कान के कच्चे होते हैं और कुछ खास लोगों की बातों पर बिना तहकीकात ही विश्वास कर लेते हैं. ये खास लोग बहुत अच्छी तरह से समझते हैं कि इन संस्थापकों को क्या सुनना पसंद है और क्या नहीं और इस बात का भरपूर लाभ लेते हैं.

दूसरी तरफ वो दूसरों की बात को संवेदना के साथ या ध्यान पूर्वक नहीं सुनते और अक्सर दूसरों की भावनाओं की उपेक्षा भी कर जाते हैं.

ऐसी और अन्य कुछ विशेषतायें इस संस्थापकों के लिए प्रारंभिक भूमिका में अक्सर शक्ति का काम करती है. पर जैसे-जैसे व्यवसाय का विस्तार होता जाता है, उन्हें अपने व्यवसाय को

संयोजित (consolidate) करने पर ध्यान देना पड़ता है. और तत्पश्चात सीढ़ी पर चढ़ने की तरह कई मामलों में एक विपरीत पद्धति अपनानी पड़ सकती है. उनमें से कुछ बदलाव इस प्रकार हैं:

क. अनौपचारिक कार्य प्रणाली से औपचारिकता की ओर
ख. हाथ, आँख और कान से नियंत्रण की बजाय दिमाग से संचालन
ग. भावना प्रधान की जगह तथ्य प्रधान निर्णय पद्धति
घ. संचालक भूमिका (Management role) से निवेशक या मालिकाना भूमिका (Investor or owner role) की ओर
ङ. पारिवारिक व सामाजिक संबंधों से बाहर विश्वास की सीमाओं का विस्तार और पेशेवर कर्मचारियों एवं सलाहकारों पर निर्भरता

विडम्बना ये है कि अधिकांश संस्थापक इस आवश्यक परिवर्तन को नेतृत्व प्रदान नहीं कर पाते, इसलिए अक्सर एक स्तर के बाद उन्हें विकास नहीं विनाश का सामना करना पड़ता है. कहीं-कहीं अगर दूसरी पीढ़ी जागरूक है तो संस्था इस परिवर्तन को अपना लेती है. हाँलाकि इतिहास एवं परम्परा के समर्थक इस अनुभव को सहजता से स्वीकार नहीं करते. बिरले संस्थापक ही ऐसे होते हैं जो अपने जीवन काल में स्वयं अपने नेतृत्व द्वारा अपने द्वारा निर्मित इन विलक्षण संस्थाओं को निरंतर सृजनात्मक नवीनता प्रदान करते रहते हैं.

आवश्यकता मात्र समान दिशा में अत्यधिक मेहनत की नहीं है. आवश्यकता वक्त के अनुसार प्रक्रिया एवं दिशा बदलने की है. एक्सीलरेटर (Accelerator) को मात्र जोर से दबाने से गाड़ी तेज नहीं चलती है. जहाँ गीयर (Gear) बदलना जरूरी है, वहाँ उसे बदलना ही पड़ता है. और जहाँ स्टियरिंग (Steering) घुमाना जरूरी हो, नहीं घुमाने से दुर्घटना हो जाती है.

ग्रीस के पुराणों में इकारस (ICARUS) नाम की एक चिड़िया का जिक्र है. उसके पंख अत्यंत शक्तिशाली थे पर वे मोम के बने हुए थे. एक बार उसे अपनी शक्ति पर अहंकार हो गया और वह उड़ता ही चला गया. उड़ते-उड़ते वह सूर्य के नजदीक चला गया और उसके पंख पिघल गए. वह जमीन पर आ गिरा और मर गया. अत्यधिक अनुपात में प्रयोग के कारण उसकी शक्ति उसकी कमजोरी बन गयी.

शाश्वत विकास के लिए अनुपात एवं मर्यादाओं का ज्ञान आवश्यक है. निरंतर परिवर्तनशील विश्व में रूढिवादिता का त्याग और सृजनात्मक नवीनता को अपनाना जरूरी है. परिवर्तन तो होगा ही. या तो उसे हम गले लगाएं या फिर शिव तो तांडव नृत्य कर प्रलय लायेंगे ही. पानी में उठते बुलबुले की तरह अधिकांश व्यवसाय खत्म होते रहेंगे.

समय के क्षितिज पर फिर भी नजर आयेंगी कुछ चुनिंदा संस्थाएँ जिनका नेतृत्व ऐसे लोग कर रहे हैं जिनमें दूरदर्शिता है, जो अपने आप से भरे हुए नहीं हैं, जिनके मस्तिष्क में अपने शक्ति का नशा चढ़ा नहीं है, जो नश्वरता के सत्य को स्वीकार करते हैं, जो अपने ज्ञान की मर्यादा को समझते हैं और सदा सीखने को तत्पर रहते हैं, जो अपने आप को परिवर्तन का शिकार महसूस नहीं करते बल्कि शिकारी बनते हैं, जो इतिहास में जीने की चेष्टा नहीं करते बल्कि एक सुन्दर भविष्य के सपने देखते हैं, जो ना तो स्वयं बैसाखी बनते हैं और न दूसरों को परावलम्बी बनाते हैं, जो भावी पीढ़ी को संस्कार भी देते हैं और स्वतंत्रता भी और छोड़ जाते हैं अपने जैसा नहीं, अपने से कमजोर भी नहीं बल्कि अपने से सशक्त नेतृत्व. क्योंकि हर आने वाले कल को आज से बेहतर होना ही चाहिए. विकास तो होना ही चाहिए.

राजेश जैन